*विश्व में वित्तीय परिदृश्य की उभरती प्रवृत्तियां: भारत के लिए चुनौतियां और अवसर**

हारुन आर. खान

नमस्कार सिमबायोसिस। डॉ. रजनी गुप्ते, उप कुलपति, सिमबायोसिस इंटरनेशनल यूनिवर्सिटी, डॉ. भामा वेंकटरमणी, निदेशक, सिमबायोसिस सेंटर फार मैनेजमेंट स्टडीज, श्री वाई.एम.देवस्थली, अध्यक्ष एवं प्रबंध निदेशक, एल एंड टी फाइनांस होल्डिंग्स लिमि., श्री एलेक्जेंडर के. शैटलर, वित्तीय काउंसलर एंड ड्यूच बंडसबैंक के प्रतिनिधि, संकाय-सदस्य, विद्यार्थियो, आमंत्रित गणमान्यजन और मीडिया के मित्रगण। आपके बीच आकर और विश्व में वित्तीय परिदृश्य की उभरती प्रवृत्तियों पर आयोजित तीसरे अंतरराष्ट्रीय सम्मेलन का उद्घाटन करते हुए मुझे अपार हर्ष हो रहा है। पिछला सात साल काफी हलचल भरा था और सभी की दिलचस्पी का विषय बना हुआ था खासतौर से सभी अर्थव्यवस्थाओं में नीति-निर्माताओं के लिए। एक के बाद एक उत्पन्न संकट ने वर्तमान नीतियों की खासी परीक्षा ले ली है, इस बात के लिए विवश किया है कि अनेक नीतियों को पुनः लागू किया जाए तथा गैर-परंपरागत नीतियों को अपनाया जाए। संक्षेप में कहें तो पिछले दिनों में विश्व स्तर पर वित्तीय संकट की तीव्रता इस कदर थी कि वित्तीय परिदृश्य में आमूलचूल परिवर्तन हुआ है। मैं इस परिदृश्य में आपसे उन महत्वपूर्ण घटनाओं के बारे में संक्षेप में बात करूंगा जो इस समय हमारे वैश्विक दृष्टिकोण को आकार प्रदान कर रही हैं और उनका भारत पर क्या प्रभाव पड़ रहा है। मैं पिछली सदी में आए प्रमुख संकटों से पड़ने वाले प्रभावों पर संक्षिप्त में प्रकाश डालूंगा तथा इस संदर्भ में भी बात करेंगे कि विश्व के वित्तीय परिदृश्य के साथ भारत के बढ़ते संबंधों का विविध आयाम क्या है तथा साथ ही बाहरी क्षेत्र से हमारे देश पर पड़ने वाले प्रभावों की मौजूदा स्थिति पर विचार करेंगे। अंत में, अपनी बात समाप्त करने से पहले मैं उन मुद्दों पर भी प्रकाश डालूंगा जो विदेशी मुद्रा भंडार से संबंधित हैं जो बाहरी क्षेत्र के प्रभावित होने तथा अस्थिरता की स्थिति में सबसे पहले बचाव का उपाय बनता है।

ए. विश्व परिदृश्य

विकसित अर्थव्यवस्थाएं

2. अंतरराष्ट्रीय मुद्रा कोष ने विश्व की विकास दर को 2015 एवं 2016 में 3.5 और 3.7 प्रतिशत का अनुमान[1] दिया है। यह अनुमान उसके अक्तूबर 2014 के विश्व आर्थिक परिदृश्य में किए गए अनुमान से 0.3 प्रतिशत कम है। इस संशोधन से पता चलता है कि चीन, रूस, यूरो क्षेत्र, जापान तथा कुछ तेल निर्यात करने वाले देशों की विकास की संभावनाओं का पुनः मूल्यांकन किया गया है। यह भी अनुमान दिया गया है कि विश्व के व्यापार की मात्रा तथा उन्नत अर्थव्यवस्थाओं में उपभोक्ता मूल्य भी गिरेंगे। विश्व बैंक ने इसकी विश्व आर्थिक परिदृश्य रिपोर्ट, जनवरी 2015 में विश्व के विकास अनुमान को 2015 में 3.4 प्रतिशत से घटाकर 3.0 प्रतिशत कर दिया है। जापान तकनीकी मंदी के दौर से उबर चुका है किंतु बैंक आफ जापान के 2.0 प्रतिशत के मुद्रास्फीति के लक्ष्य से थोड़ा सा पीछे है। विकास की कमज़ोर दर को देखते हुए बैंक आफ कनाडा और रिज़र्व बैंक आफ आस्ट्रेलिया ने दरों में कटौती करने की घोषणा की है। इसलिए, विश्व की विकास दर मंदी के चरण में बने रहने की उम्मीद है जिसे लैरी समर्स[2] ने 'दीर्घकालिक गतिरोध' की संज्ञा दी है। उन्नत देशों में अमरीका सबसे अच्छी संभावनाएं दे रहा है जबकि यूरो क्षेत्र चिंता का विषय बना हुआ है यद्यपि यूरोपियन सेंट्रल बैंक ने अपस्फीति की स्थिति से निपटने के लिए मात्रागत सहजता (क्यू ई) का सहारा लिया है। ग्रीस को यह भय बना हुआ है कि कहीं यूरो क्षेत्र में पुनः संकट की स्थिति न उत्पन्न हो जाए हालांकि यूरोपियन वित्त मंत्री इस सहमति पर पहुंचे हैं कि ग्रीस को उबारने की योजना को अगले चार महीने तक समर्थन प्रदान किया जाए। लेकिन ग्रीस का उससे बाहर निकलने की संभावना काफी क्षीण है, जिसके लिए अनेक घटनाएं घट सकती हैं और जिसके लिए संभव है कि बाज़ार तैयार नहीं होगा। युक्रेन और मध्य-पूर्व भू-राजनैतिक-जोखिम के स्रोत हैं। अमरीकी अर्थव्यवस्था की संभावनाओं को देखते हुए अमरीकी डालर कई देशों की तुलना में बहुत मज़बूत हुआ है और खासतौर से यूरो, कनाडियन डालर, आस्ट्रेलियन डालर तथा जापानी येन की तुलना में। अमरीकी डालर की मज़बूती तथा तेल की नीची कीमतों को देखते हुए अब देखना यह है कि अमरीकी फेडरल रिज़र्व

---

* श्री हारुन आर. खान, उप-गवर्नर, भारतीय रिज़र्व बैंक द्वारा सिमबायोसिस सेंटर फार मैनेजमेंट स्टडीज, पुणे द्वारा 23 फरवरी, 2015 को विश्व में वित्तीय परिदृश्य की उभरती प्रवृत्तियां विषय पर आयोजित तीसरे अंतरराष्ट्रीय सम्मेलन में दिए गए उद्घाटन भाषण पर आधारित। वक्ता द्वारा श्री आर. सुब्रमणियन और श्री सुरजीत बोस के योगदान के प्रति आभार प्रकट किया गया है।

[1] आइएमएफ वर्ल्ड इकोनामिक आउटलुक अपडेट, जनवरी, 2015

[2] अमरीकी अर्थव्यवस्था की आर्थिक संभावनाएं: दीर्घकालिक गतिरोध, उत्पादन की काल-आधारित निर्भरता, और शून्य से नीचे की ओर उन्मुखता: लैरी समर्स

कौन सी नीतियां अपनाने जा रहा है- वह दरों को बढ़ाने के चक्र में पहला कदम कब उठाने जा रहा है और उसके बाद वह किस गति से मौद्रिक कठोरता की स्थिति पैदा करेगा।

उभरते बाज़ार और विकासशील अर्थव्यवस्थाएं

3. आइएमएफ ने हाल में विश्व के आर्थिक परिदृश्य के बारे में जो अनुमान अद्यतन किए हैं कि उभरते बाज़ारों तथा विकासशील अर्थव्यवस्थाओं में विकास की दर कमोबेश 2015 में 4.3 प्रतिशत और 2016 में बढ़कर 4.7 प्रतिशत पर बनी रहेगी - वे अक्तूबर 2014 में दिए गए अनुमानों से कमज़ोर हैं। भारतीय अर्थव्यवस्था के लिए विकास दर के बारे में दिए गए अनुमान में थोड़ा सा संशोधन किया गया है जो 6.4 प्रतिशत से कम करके 6.3 प्रतिशत कर दिया गया है। विश्व बैंक ने अपनी ग्लोबल इकानामिक प्रासपेक्ट्स रिपोर्ट(जनवरी 2015) में भी ईएमडीई के लिए विकास के अनुमान में वर्ष 2015 के लिए कटौती करते हुए उसे 5.2 प्रतिशत से घटाकर 4.8 प्रतिशत कर दिया है। इसका मुख्य कारण चीन में वृद्धि की धीमी दर, रूस में विकास की कमज़ोर संभावनाएं तथा वस्तुओं का निर्यात करने वाले देशों में वृद्धि क्षमता में गिरावट रहा है। चीन में विकास में गिरावट के बारे में सभी जानते हैं। कुछ हद तक, धीमी वृद्धि की वजह चीन प्राधिकारियों द्वारा लागू की गई नीति रही है क्योंकि तेजी से बढ़ते हुए ऋण से होने वाले प्रभावों को कम करना चाहते हैं और निवेशजन्य-आर्थिक मॉडल से हटना चाहते हैं। यहां यह देखना है कि क्या चीन इसे सहज तरीके से कर ले जाएगा या फिर एशिया के शेष भागों में इसके क्या प्रभाव पड़ेगा। चीन द्वारा मौद्रिक सहजता लाने के लिए किसी भी प्रकार की नीतिगत पहल से पूरे एशियाई क्षेत्र पर क्रमिक रूप से प्रभाव पड़ेगा। ईएमडीई के लिए पूंजी के प्रवाह के बारे में अंतरराष्ट्रीय वित्त संस्थान(आइआइएफ) का कहना है कि 2015 उभरते बाज़ारों के लिए पूंजी के प्रवाह की दृष्टि से एक और दबावपूर्ण वर्ष साबित होगा। ईएमडीई में पिछले साल पूंजी के प्रवाह में काफी गिरावट हुई थी, जिसके इस वर्ष भी और अधिक कम होने की संभावना है, क्योंकि फेडरल रिज़र्व ने नीतिगत दरें बढ़ाना प्रारंभ कर दिया है और ईएमडीई की विकास की स्थिति निस्तेज बनी हुई है। वर्ष के दौरान प्रवाह पुनः अस्थिर रहने की संभावना है क्योंकि फेडरल रिज़र्व की नीति का मार्ग बदल जाने, तेल बाजार की अनिश्चितताओं एवं राजनैतिक जोखिम से प्रत्याशाएं बदल गई हैं और बाज़ार प्रभावित हो गए हैं। राष्ट्रों की भिन्नता जिसे रुचिर शर्मा ने अपनी पुस्तक 'ब्रेकआउट नेशंसः अगले आर्थिक चमत्कार की तलाश में' इस विषय को बहुत अच्छी तरह से प्रस्तुत किया है, जो वर्ष 2015 के लिए प्रमुख थीम बना रहेगा। जहां कई बड़े ईएमडीई जिनके बारे में सभी जानते हैं कि वे प्रभावित हुई हैं, से अपेक्षा की गई है कि वे अपने मैक्रो नीति ढांचे को सुदृढ़ बनाएं, और तेल की कम कीमतों का लाभ उठाएं, फेडरल रिज़र्व के पिछले कठोर चक्र के विश्लेषण से पता चलता है कि ईएमडीई में आने वाले वर्ष में जबरदस्त जोखिम के संकट की घटनाएं घट सकती हैं। इस बात का डर है कि ईएमडीई बाज़ार करेंसी, सरकारी अथवा बैंकिंग संकट के गोफन में चले जाएं क्योंकि जिन वर्षों में फेडरल रिज़र्व ने मौद्रिक नीति कठोर की थी उनमें सामान्यतया बाज़ार में उथल-पुथल अधिक हुई थी। जहां ईएमडीई का पूंजी प्रवाह प्रभावित हो सकता है, वहीं प्रमुख सवाल यह है कि ये अमरीका की दरों में वृद्धि के प्रति कितने संवेदनशील हैं। आइआइएफ के अनुमान के अनुसार दरों में 0.5 प्रतिशत की वृद्धि से, यदि अन्य चीजें समान रहें तो ईएमडीई में लगभग 10% पूंजी का प्रवाह अथवा 30 बिलियन अमरीकी डालर का नुकसान पहुंचेगा। लेकिन, ये वर्ष शायद कुछ भिन्न होगा क्योंकि यूरोपियन सेंट्रल बैंक तथा बैंक ऑफ जापान दोनों अत्यधिक निभावकारी मौद्रिक नीतियां अपना रहे हैं। इससे अमरीकी दर में वृद्धि का झटका हलका पड़ जाएगा।

4. यहां चिंता की बात यह है कि भविष्य में दरों में वृद्धि के बारे में फेडरल रिज़र्व के स्वयं की भविष्यवाणी से बाज़ार किस तरह डिस्काउंट करेगा। दर में वृद्धि-पथ के बारे में फेडरल रिज़र्व की भविष्यवाणी और बाज़ार की अपेक्षा क्या है, इनके बारे में भिन्नता से सभी अच्छी तरह अवगत हैं। अमरीका में उम्मीद से ज्यादा दर में वृद्धि चक्र से ईएमडीई के पूंजी प्रवाह पर प्रभाव पड़ेगा। पिछले वर्ष से लगातार VIX[3] तकरीबन 14.2 के औसत पर रहा है, जो 2006 से अब तक सबसे कम था। दीर्घकालिक औसत 19.6 प्रतिशत रहा है। VIX में किसी भी प्रकार की बढ़ोतरी से ईएमडीई से पूंजी के प्रवाह को बाहर की ओर ले जाएगी।

तेल की कीमतों का परिदृश्य

5. विश्व में तेल की कीमतों में तेजी से गिरावट की स्थिति को वित्तीय प्रेस में, अच्छी तरह से प्रकाशित किया गया है। जहां 2014 के मध्य से अब तक तेल की कीमतों में 50 प्रतिशत से अधिक की गिरावट हो चुकी हैं, वहीं हाल के सप्ताहों में कीमतें ऊपर चढ़ी हैं।

[3] VIX, शिकागो बोर्ड ऑप्शन एक्सचेंज मार्केट की अस्थिरता का सूचकांक है, जो एसएंडपी 500 सूचकांक ऑपशंस की निहित अस्थिरता की प्रसिद्ध माप है। यह आगामी 30 दिन के दौरान स्टॉक बाजार अस्थिरता की बाज़ार प्रत्याशा की एक माप हैं। अस्थिरता सूचकांक का विचार, और वित्तीय लिखत जो ऐसे सूचकांक पर आधारित हैं, का पहली बार प्रो. मेनाकेम और प्रो.डैन गलाई ने 1986 में विकसित एवं निरूपित किया था।

अचानक कीमतों में लगभग 20 प्रतिशत की वृद्धि अप्रत्याशित थी जबकि अनेक विश्लेषक यह उम्मीद कर रहे थे कि तेल की कीमतों में और भी गिरावट होगी। अंतरराष्ट्रीय स्तर पर तेल की कीमतों में जो उतार-चढ़ाव हुआ है वह बाज़ार के अनुमानों एवं अकादमिक अनुसंधान का विषय है। जैसाकि आप जानते हैं कि तेल की कीमतों से न केवल मांग और आपूर्ति की बुनियादी आर्थिक शक्तियों का पता चलता है बल्कि भू-राजनैतिक घटनाओं, नवीकरण उर्जा में प्रौद्योगिक उन्नयन, मौसमी परिवर्तन और ऊर्जायुक्त प्रौद्योगिकी को अपनाया जाना परिलक्षित करता है।

6. उत्पादन में परिवर्तन तथा खपत में कमी आना तेल की कीमतों में अचानक गिरावट आने का पूरी तरह से संतोषजनक जवाब नहीं मालूम पड़ता है। जहां तेल का उत्पादन अपेक्षित स्तर के निकट था, वहीं उसकी खपत पहले किए गए अनुमानों से थोड़ा सा ही कम थी। अनेक विश्लेषण इस बात से सहमत हैं कि तेल की दैनिक मांग के औसत दैनिक उत्पादन से थोड़ा सा कम है जिसके हिसाब से प्रतिदिन 94 मिलियन बैरल से थोड़ा अधिक की खपत है जबकि प्रतिदिन उत्पादन तकरीबन 1.5 मिलियन बैरल है। अंतरराष्ट्रीय निपटान बैंक (बीआइएस) ने हाल की उनकी टिप्पणी[4] में कहा है कि तेल के मूल्य में गिरावट की तेजी और प्रतिदिन मूल्यों में इतना ज़्यादा परिवर्तन वित्तीय आस्तियों की ओर याद दिलाता है। पेट्रोलियम निर्यात राष्ट्र संगठन (ओपेक) के उत्पादन कम न करने का निर्णय निःसंदेह अंतरराष्ट्रीय स्तर पर कच्चे तेल की कीमतों में गिरावट का मुख्य कारण रहा है। लेकिन, बीआइएस के अध्ययन से पता चलता है कि तेल की कीमतों में गिरावट के अन्य कारक भी शामिल हो सकते हैं। एक महत्वपूर्ण कारण यह है कि हाल के वर्षों में तेल क्षेत्र द्वारा लिया गया कर्ज, काफी बढ़ गया है। तेल-उत्पादनकर्ताओं द्वारा इस उम्मीद में कि भविष्य में तेल की कीमतें बढ़ेंगी, काफी कर्ज ले लिया गया, लेकिन तेल की कीमतों में अप्रत्याशित गिरावट से तेल का उत्पादन करने वालों का तुलनपत्र कमज़ोर हो गया जिसने उन्हें मजबूर कर दिया है कि वे अपने उत्पादन आगे बेचना जारी रखें। इसके अलावा, कर्ज को चुकाने की वचनबद्धता ने भी उत्पादन स्तर बनाए रखने तथा उत्पादन कम न करने के लिए बाध्य कर रखा है, जिससे तेल की आपूर्ति उसकी संगत मांग से ज़्यादा बनी हुई है। यह भी पाया गया है कि स्वैप-डीलर्स, तेल के निर्यातकों के साथ अत्यधिक अस्थिरता तथा तुलनपत्र पर दबाव के समय में किसी प्रकार का बचाव बेचने के लिए तत्पर नहीं हैं। दरअसल, तेल की कीमतों के डायनामिक्स को समझने के लिए और अधिक अध्ययन और वित्तीय बाज़ार तथा मैक्रो-आर्थिक कारकों के साथ उसकी क्रियाओं को देखने की ज़रूरत है।

7. तेल का उत्पादन करने वाले देश, एक अलग प्रकार के तेल संबंधी आघात का सामना कर रहे हैं और उन्होंने भी अपने राष्ट्रीय बजट की समीक्षा करना प्रारंभ कर दिया है, जो तेल से प्राप्त होने वाले राजस्व पर आधारित है। विभिन्न देशों में कीमतों का प्रभाव अलग-अलग रहा है - खाड़ी के अधिकांश देशों ने तथा नार्वे ने अपने सरकारी खज़ाने में पर्याप्त भंडार जमा कर लिए हैं। लेकिन कुछ अन्य देश भी हैं जिन्हें तेल उत्पादन में बहुत लागत लगती है, यदि तेल की कीमतों में और अधिक गिरावट होती है तो उन्हें बड़े जोखिम उठाने पड़ सकते हैं। हाल के सप्ताहों में यह प्रवृत्ति उलट सी गई है और बाज़ार के विश्लेषक इसे स्वागत योग्य कदम मानेंगे यदि तेल की कीमतें कुछ हद तक बहाल हो जाती हैं और उनमें साम्य पैदा हो जाता है।

बी. भारत और विश्व का वित्तीय परिदृश्य

8. इस पृष्ठभूमि में, अब मैं भारतीय संदर्भ की बात करना चाहता हूं। विश्व के वित्तीय परिदृश्य में भारत का स्थान कहां है? भारत की एक ऐसी प्रमुख अर्थव्यवस्था है जहां विकास की संभावनाओं को नीचे की ओर नहीं लाया गया है। जबकि ब्रिक्स में इसके समूह साथी देश चीन का अनुगमन करते हुए दिखाई देते हैं जो मंदी के मार्ग पर चल रहा है। ब्राजील में मंदी एवं स्फीतिकारी स्थिति झांक रही है, रुस मंदी की चपेट में चल रहा है और दक्षिण अफ्रीका में विकास दर घट रही है। भारत ईएमडीई के बीच एक परेशनी दिखाने वाले राष्ट्र के रूप में उभर रहा है। राजनैतिक स्थिरता के साथ राजकोषीय एवं मौद्रिक अनुशासन के प्रति दृढ़ वचनबद्धता तथा आर्थिक सुधार से विकास की गति तेज़ हो गई है। हम अपने देश के भौगोलिक हदबंदी के फायदे तथा बड़े पैमाने पर उद्यमिता श्रेणी को ध्यान में रखें तो भारत विश्व की पूंजी का गंतव्य बनना चाहिए यदि हम संरचनागत अड़चनों को दूर करने के उपाय करें तथा अर्थव्यवस्था की उत्पादकता को बढ़ा दें।

अब तक की यात्रा

9. 1980 दशक के प्रारंभ तक, भारत का व्यापार शासन निरंकुश तरीके का था जिसमें आयात-शुल्क बहुत ही मामूली था और गैर-शुल्क संबंधी रुकावटें थीं। 1980 दशक के अंत से, सरकार ने आयात लाइसेंस प्रणाली को तोड़ना प्रारंभ कर दिया और शुल्क-ढांचे को आसान बनाते हुए और भी खुले व्यापार-शासन की ओर आगे बढ़ गई। संकट वर्ष 1990-91 भारतीय आर्थिक इतिहास की उल्लेखनीय

[4] टिप्पणी https://www.bis.org/statistics/gli/glibox_feb15.htm पर उपलब्ध है।

घटना थी : भारत को बाहरी भुगतान के संकट का सामना करना पड़ा था। औद्योगिक, व्यापार, बैंकिंग और विनिमय दर नीतियों में मूलभूत परिवर्तन किए गए।

चालू खाता

10. भारत एक विकासशील देश हैं एवं यहां पर ऊर्जा की अपर्याप्तता है इसलिए इसके चालू खाते की स्थिति हमेशा घाटे की रही है, केवल पिछले दशक के प्रारंभ में थोड़े से समय के लिए चालू खाता घाटे की स्थिति में नहीं था। भारत का निर्यात व्यापार उल्लेखनीय रूप से बढ़ा है, निर्यात 1990-91 के 18.1 बिलियन अमरीकी डालर से बढ़कर 2013-14 में 314 बिलियन अमरीकी डालर हो गया है। निर्यातों में श्रमिक प्रधान उत्पादों (जैसे-सूतीवस्त्र) के स्थान पर पूंजी-प्रधान वस्तुएं (जैसे-इंजीनियरिंग) निर्यात की जाने लगी हैं। भारत के व्यापार भागीदार भी बदल गए हैं और उभरते बाजारों के भागीदार अधिक हो गए हैं। सेवाओं के निर्यात में अत्यधिक वृद्धि हुई है जो 1990-91 के 4.6 बिलियन अमरीकी डालर से बढ़कर 2013-14 में 151.5 बिलियन अमरीकी डालर हो गई है। साथ ही, वाणिक आयात भी बढ़ा है क्योंकि भारत की अर्थव्यवस्था क्रमिक रूप से आगे बढ़ रही है और विश्व अर्थव्यवस्था के साथ जुड़ रही है। आयात जो 1990-91 में 24 बिलियन अमरीकी डालर था वह 2013-14 में बढ़कर 450 बिलियन अमरीकी डालर हो गया। जहां ऊर्जा से संबंधित आयात में वृद्धि हुई थी, जैसे तेल एवं कोयले, कीमती धातुओं, खासतौर से स्वर्ण के आयात में भी हाल के वर्षों में वृद्धि हुई है। यह उल्लेखनीय है कि घरेलू स्तर पर खपत में वृद्धि के अलावा तेल के आयात में तीव्र वृद्धि कुछ हद तक पीओएल के बढ़ते आयात के कारण थी। समग्र रूप से, वाणिक व्यापार लगातार घाटे में रहा है। दूसरी ओर, अदृश्य में निजी अंतरण/विप्रेषण एक जैसे निरंतर बने रहे हैं। सरकारी तौर पर यह बताया गया है कि भारत को 2013 में विश्व में सबसे अधिक लगभग 70 बिलियन अमरीकी डालर का विप्रेषण प्राप्त हुआ था, जो आयात का लगभग 15 प्रतिशत था। इसके फलस्वरूप, चालू खाता घाटा आमतौर पर एक सीमा के भीतर था, सिर्फ 2011-12 एवं 2012-13 को छोड़कर जब यह जीडीपी की तुलना में क्रमशः 4.2 प्रतिशत और 4.8 प्रतिशत तक बढ़ गया था। वर्ष 2013-14 की दूसरी तिमाही से चालू खाता घाटा धीरे-धीरे कम होना शुरू हुआ और एक वहनीय सीमा में बना रहा है। चालू खाता घाटा 2014-15 की दूसरी तिमाही में बढ़कर 10.1 बिलियन अमरीकी डालर (जीडीपी का 2.1 प्रतिशत) हो गया था जो उसकी पिछली तिमाही में 7.8 बिलियन बिलियन अमरीकी डालर (जीडीपी का 1.7 प्रतिशत) तथा 2013-14 की दूसरी तिमाही में 5.2 बिलियन अमरीकी डालर (जीडीपी का 1.2 प्रतिशत) था। चालू खाता घाटे में वृद्धि का मुख्य कारण व्यापार में काफी घाटा होना रहा है जिसमें निर्यात में वृद्धि घट गई थी और आयात में वृद्धि हो गई थी। अंतरराष्ट्रीय स्तर पर तेल की कीमतों में तीव्र गिरावट से, चालू खाता घाटा पूरे वर्ष, पिछले साल के जीडीपी के 1.7 प्रतिशत से कम रहने की उम्मीद है।

पूंजी खाता

11. चालू खाता घाटा के अंतर को समाप्त करने के लिए भारत की निर्भरता पूंजी के प्रवाह पर है। विदेशी प्रत्यक्ष अंतर्वाह (एफडीआई) और पोर्टफोलियो निवेश प्रवाहों के प्रमुख हिस्से हैं। खासतौर से कर्ज का प्रवाह, बाहर से वाणिज्यक उधार, बहुत बढ़ा है, लेकिन कुल पूंजी प्रवाह की तुलना में कर्ज के प्रवाह का हिस्सा 1990-91 के 80 प्रतिशत से घटकर 2011-12 में लगभग 30 प्रतिशत हो गया था। 2007-08 में कुल पूंजी का प्रवाह 107 बिलियन अमरीकी डालर की ऊंचाई पर पहुंच गया था किंतु 2008-09 में लगभग 7.2 बिलियन अमरीकी डालर कम हो गया जो यह दर्शाता है कि इस प्रकार के प्रवाहों में अस्थिरता होती है। अब तक चालू राजकोषीय वर्ष में, भारत को एफडीआई के रूप में लगभग 25 बिलियन अमरीकी डालर का प्रवाह प्राप्त हो चुका है और पोर्टफोलियो प्रवाह में 21 बिलियन अमरीकी डालर के बदले 36 बिलियन अमरीकी डालर प्राप्त हुए हैं जिसकी तुलना में पिछले वर्ष पोर्टफोलियो प्रवाह में इससे एक बिलियन अमरीकी डालर कम प्राप्त हुए थे। वर्ष 2014-15 के दौरान पूंजी का प्रवाह इतना होने की उम्मीद है जो चालू खाता घाटा को पूरा करने के लिए पर्याप्त से अधिक होगा।

तेल की कीमतें घटने का प्रभाव

12. तेल की कीमतों में गिरावट ईएमडीई के लिए निश्चित ही वरदान साबित हुई है, खासतौर से भारत जैसे देश के लिए जिसकी ऊर्जा हेतु आयात पर निर्भरता है। यह एक राजकोषीय प्रोत्साहन की तरह कार्य करता है और विश्व में उपभोग को तेजी हासिल होगी ज्यों - ज्यों उपभोक्ता ऊर्जा पर कम खर्च करने लगेंगे। तेल की कीमतें कम होने से भारत को फायदा होगा, क्योंकि इससे महंगाई कम होती है और बजट तथा राजकोषीय प्रबंधन में सहजता उत्पन्न होती है। 2013-14 में कच्चे तेल का आयात 165 बिलियन अमरीकी डालर का था, जो कुल आयात बिल का लगभग 36 प्रतिशत था। अप्रैल-नवंबर 2014 में यह 90.3 बिलियन अमरीकी डालर था जो कुल आयात का तकरीबन 28.3 प्रतिशत था। एक अनुमान के अनुसार तेल की कीमत में 10 डालर प्रति बैरल की कमी होने से देश का आयात बिल कम हो जाएगा, चालू खाता घाटा 10 बिलियन अमरीकी

डालर कम होगा जो जीडीपी का 0.48 प्रतिशत होगा। एक अन्य अनुमान के अनुसार कच्चे तेल की कीमतों में 10 प्रतिशत की कमी से उपभोक्ता मूल्य सूचकांक - आधारित महंगाई लगभग 20 आधार बिंदु (बीपीएस) कम होगी और इससे जीडीपी में लगभग 30 आधार बिंदु की वृद्धि होगी।

13. इससे एक बढ़िया सेटिंग पैदा होगी और वह चालू खाता को वापस स्वस्थ स्थिति में लाएगी और यह राजकोषीय समेकन के लिए भी कार्य करेगी। यह हमारे लिए बहुत मूल्यवान है और हम इस अवसर को किसी भी प्रकार से खोना नहीं चाहते। लेकिन तेल की कीमतें 70-75 अमरीकी डालर के स्तर तक गिरने से अप्रत्याशित प्रभाव उत्पन्न हुए हैं। क्या कच्चा तेल की कीमतों में गैर-संदिग्ध तरीके से गिरावट होना विश्व अर्थव्यवस्था के लिए अच्छा है? तेल का उत्पादन करने वाले भविष्य के निवेश में कटौती करते जा रहे हैं। इसका अर्थ यह हुआ कि तेल और गैस उद्योगों में नौकरी कम हो रही है तथा सपोर्ट सेवाएं भी कम हो रही हैं। एनर्जी के भंडार में हानि हो रही है। ऐसा लगता है कि तेल की कीमतों में कमी एक मात्र ऐसी महत्वपूर्ण वजह है जिससे अनेक अर्थ-व्यवस्थाओं में महंगाई कम हो रही है। केंद्रीय बैंकों को अपस्फीति के शिकंजे का डर है क्योंकि इससे उपभोग कम हो जाएगा और कर्ज का वास्तविक बोझ बढ़ता जाएगा यदि महंगाई लंबे समय तक ऋणात्मक बन जाती है या बहुत निचले स्तर पर आ जाती है। भारत के लिए ऋणात्मक स्थिति यह हो सकती है कि विप्रेषण कम हो जाएंगे और प्रभावित देशों से पूंजी का प्रवाह भी कम हो जाएगा।

सी. विगत वर्षों के प्रमुख संकट

14. भारत द्वारा विगत वर्षों में जिन प्रमुख संकटों का सामना करना पड़ा है वे हैं - 1997 की एशियाई वित्तीय संकट, 1998 का एलटीसीएम एवं रुस की चूक, 2000 में डाटकॉम संकट, 2007 का सबप्राइम संकट, 2011 में यूरोपियन सरकारी ऋण संकट तथा वर्ष 2013 में फेड रिज़र्व द्वारा टेपरिंग की घोषणा। संकट के बारे में बात करते हुए भारतीय रिज़र्व बैंक के पूर्व गवर्नर[5] डॉ.डी. सुब्बाराव ने कहा था - '*अर्थशास्त्र और वित्त के मामले में, इतिहास स्वंय को दोहराता है, इसलिए नहीं कि यह इसकी ऐतिहासिक फितरत है, बल्कि इसलिए कि हम इतिहास से सीखना नहीं चाहते और उसे दुबारा घटित होने देते हैं।*' इसलिए भारत जैसे ईएमडीई के लिए ज़रूरी है कि वह पिछले संकटों के भीतर झांके और भविष्य के आघातों से बचने के लिए कारगर कदम उठाए।

भारत पर संकटों का प्रभाव

15. इन संकटों का भारत पर कई प्रकार से प्रभाव पड़ा है। पहला, विनिमय-दर तथा इक्विटी बाज़ार में अत्यधिक अस्थिरता से विदेशी मुद्रा भंडार कम होता जाएगा, अर्थव्यवस्था कमज़ोर होगी, रेटिंग कम होने की चुनौती बढ़ेगी, निवेशकों का विश्वास टूटेगा तथा पूंजी-प्रवाह अस्थिर हो जाएगा। दूसरा, व्यापार करने वाले प्रमुख भागीदारों में वृद्धि में कमी आने से भुगतान-संतुलन के पैरामीटर पर दबाव बढ़ेगा तथा वस्तुओं की कीमतों में अस्थिरता से मैक्रो-इकॉनॉमिक पैरामीटर प्रभावित होंगे जैसे-मुद्रास्फीति और राजकोषीय घाटा। तीसरा, कार्पोरेट विदेश से पूंजी जुटाने में असफल रहते हैं जिनसे विदेश से लेकर घर तक वित्तीय संबंधी समस्याएं उत्पन्न होती हैं और विदेशी मुद्रा जिसको हेज नहीं किया गया, के कारण तुलन-पत्र संबंधी चिंताएं बन जाती हैं और कार्पोरेट की साख को प्रभावित करती हैं। चौथा, वित्तीय संस्थाओं को अंतरराष्ट्रीय वित्तीय बाज़ार तक पहुंचने में कठिनाई होती है। पाचवां, विकसित देशों की मौद्रिक नीति देश के मैक्रो-आर्थिक पैरामीटरों को प्रभावित करती है जैसे-हाल में फेडरल रिज़र्व द्वारा आस्ति-खरीद को कम किए जाने की घोषणा। 22 मई 2013 को अध्यक्ष बेन बर्नानेक ने यह पहले ही कह दिया था कि फेड द्वारा प्रतिभूतियों की खरीद कम की जा सकती है। इससे तथा बाद के वक्तव्यों जिसे 'टेपरिंग टाक' के नाम से जाना जाता है, का उभरते बाज़ारों पर तेजी से नकारात्मक प्रभाव पडा। इस अवधि के आसपास, घरेलू चिंताएं जैसे अधिक चालू खाता घाटा, विकास में कमी, उच्च राजकोषीय घाटा, ऊँची मुद्रास्फीति और नीतिगत अनिश्चितताएं जैसी कुछ बड़ी चिंताएं विदेशी निवेशकों के लिए रही हैं।

16. टेपरिंग की घोषणा का प्रभाव तथा घरेलू चिंताओं का होना इस बात से स्पष्ट होता है कि चलनिधि कठोर बन गई तथा बाज़ार के सभी खंडों में अस्थिरता पैदा हो गई और स्टॉक मूल्यों में तेजी से गिरावट हुई। उदाहरण के लिए - 22 मई 2013 से 30 अगस्त 2013 के दौरान अमरीकी डालर की तुलना में भारतीय रूपये में 15.5 प्रतिशत का मूल्यह्रास हुआ, रुस के रुबल की तुलना में 6.04 प्रतिशत का मूल्यह्रास, दक्षिण अफ्रीका की रैंड की तुलना में 6.88 प्रतिशत तथा ब्राजील की रीयल की तुलना में 14.08 प्रतिशत का मूल्यह्रास हुआ था। इक्विटी बाज़ार में गिरावट आ गई, साथ ही सूचकांक 22 मई 2013 को 20,062 अंक पर बंद होकर 30 अगस्त, 2013 को गिरकर 18,620 अंक पर बंद हुआ।

[5] डॉ. डी. सुब्बाराव, गवर्नर, भारतीय रिज़र्व बैंक द्वारा रिजर्व बैंक के इतिहास के चौथे खंड का नई दिल्ली में प्रधान मंत्री डॉ. मनमोहन सिंह द्वारा 17 अगस्त, 2013 को किए गए विमोचन के अवसर पर की गई टिप्पणी।

पोर्टफोलियो पूंजी का अंतर्वाह जो मई 2013 के तीसरे सप्ताह तक तीव्र था वह घटना शुरू हो गया क्योंकि अमरीकी प्रतिलाभ (यील्ड) कम होने लगा और प्रतिलाभ का जो स्प्रेड था वह अत्यधिक घट गया था।

अस्थिरता को रोकने के लिए किए गए नीतिगत उपाय

17. भारतीय रिज़र्व बैंक ने विदेशी मुद्रा बाज़ार की अत्यधिक अस्थिरता को रोकने के लिए हस्तक्षेप किया और अल्पकालिक ब्याज दर को बढ़ाते हुए रुपये की चलनिधि को प्रणाली में कठोर बना दिया। तेल का विपणन करने वाली सरकारी क्षेत्र की कंपनियों के लिए उनके कच्चे तेल की डालर संबंधी मांग को पूरा करने के लिए विशेष स्वैप-विंडो खोली गई। देश के विदेशी मुद्रा भंडार को बढ़ाने के लिए बैंकों ने एफसीएनआर (बी) योजना तथा बाहर से विदेशी मुद्रा उधार के अंतर्गत लगभग 34 बिलियन अमरीकी डालर जुटाए। चालू खाता घाटे के दबाव को कम करने तथा स्वर्ण के आयात को हतोत्साहित करने के लिए भारत सरकार के परामर्श से मात्रागत तथा अन्य प्रकार की रोक स्वर्ण के आयात पर लगाई गई। दीर्घकालिक विदेशी मुद्रा के अंतर्वाह को प्रोत्साहित करने के लिए बाहरी वाणिज्यिक उधार प्रणाली को युक्तिपरक तथा उदार बनाया गया और सरकारी - प्रतिभूतियों में विदेशी निवेश की सीमा के दुरूस्त किया गया एवं बढ़ाया गया तथा साथ ही कुछ क्षेत्रों में एफडीआई उच्चतम सीमा में भी छूट प्रदान की गई।

डी. सात संयोजक चैनल

18. यहां यह बताना प्रासंगिक होगा कि भारतीय अर्थव्यवस्था पहले की तुलना में अब विश्व अर्थव्यवस्था से काफी जुड़ गई हैं, विश्व में होने वाली घटनाएं विभिन्न चैनलों के माध्यम से घरेलू अर्थव्यवस्था के अनेक खंडों को काफी हद तक प्रभावित करती हैं। वैश्वीकरण प्रक्रिया के विस्तृत होने तथा विश्व अर्थव्यवस्थाओं से जुड़ने के कारण हमारी अर्थव्यवस्था पर पड़ने वाले प्रभावों का निम्नलिखित सात चैनलों के माध्यम से महसूस किया जा सकता है - वाणिज्य, पूंजीप्रवाह, वस्तु-कीमत, भरोसा, व्यापार का चलाते रहना, संदूषण तथा केंद्रीय बैंक की कार्रवाई और संचार चैनल।

वाणिज्य चैनल

19. भारत के लिए, लगातार चालू खाता घाटे की समस्या बने रहने से उसे कम करने तथा बनाए रखना बहुत महत्वपूर्ण है जिससे नीति-निर्माण की प्रक्रिया पर अत्यधिक प्रभाव पड़ता है और सीएडी स्थिति को ध्यान में रखकर ही अंतरराष्ट्रीय संस्थाएं एवं निवेशक हमारे बारे में अंदाजा लगाते हैं। निर्यात से होने वाली आमदनी भुगतान संतुलन में राहत प्रदान करती है, ऐसी वस्तुओं का आयात करने के लिए हिम्मत देती है जो हमारे विकास के लिए महत्वपूर्ण हैं, साथ ही इससे घरेलू अर्थव्यवस्था पर गुणवत्ता एवं उत्पादकता की दृष्टि से पड़ने वाले प्रभाव सकारात्मक होते हैं।

20. निर्यात क्षेत्र को कई प्रकार की चुनौतियों का सामना करना पड़ता है, उनमें से जो सबसे महत्वपूर्ण है वह है विश्व की अनिश्चित माँग। चुनौती यह है कि मौजूदा बाज़ारों के लिए नये बाज़ार और नये उत्पाद की खोज की जाए। क्या हमारे नये तलाशे गए निर्यात गंतव्य देश विश्व के वित्तीय संकट से सुरक्षित हैं? भारत का व्यापार निष्पादन 2013-14 में काफी अच्छा बढ़ा है जिससे निर्यात में अच्छी खासी वृद्धि हुई है और आयात में कमी हुई है। विश्व में मांग बढ़ जाने तथा 2013-14 में रुपया अधिक स्पर्धात्मक हो जाने से निर्यात बढ़ गया था वहीं आयात में कमी इसलिए हुई थी क्योंकि स्वर्ण एवं तेल से इतर गैर-स्वर्ण वस्तुओं का आयात घट गया था। निर्यात में अप्रैल-जनवरी 2014-15 के दौरान 2.44 प्रतिशत की वृद्धि हुई थी जो पिछले वर्ष के 258.72 बिलियन अमरीकी डालर की तुलना में 265.03 बिलियन अमरीकी डालर था। इसी अवधि में आयात में 2.17 प्रतिशत की वृद्धि हुई थी जो 375.25 बिलियन अमरीकी डालर से बढ़कर 383.41 बिलियन अमरीकी डालर हो गया था। अप्रैल-जनवरी 2014-15 में व्यापार घाटा पिछले वर्ष की तुलना में थोड़ा सा अधिक था।

21. अंतरराष्ट्रीय स्तर पर कच्चे तेल की कीमतें घट जाने से पेट्रोलियम उत्पादों के निर्यात पर प्रभाव पड़ा और तेल से इतर वस्तुओं के निर्यात पर भी तेजी से कमी आने का प्रभाव पड़ा, वणिक निर्यात लगातार दो तिमाहियों तक वृद्धि दर्ज करने के बाद 2014-15 की तीसरी तिमाही में घट गया। विश्व की मांग कमज़ोर रहने तथा यूनिट मूल्य के लगातार घटते जाने से निर्यात का निष्पादन पंगु बन गया था। रुपए के मूल्य में वास्तविक वृद्धि से भी कुछ प्रभाव पड़ सकता था। अंतरराष्ट्रीय स्तर पर कच्चे तेल की कीमतों में गिरावट से पीओएल आयात के कारण काफी बचत बढ़ गई, बावजूद इसके कि तीसरी तिमाही में आयात बढ़ गया था। स्वर्ण का आयात भी संतुलित हो गया, सितंबर-नवंबर में मौसमी कृत्रिम रूप से बनाई गई भारी मांग भी समाप्त हो गई। दूसरी ओर, तेल से इतर स्वर्ण से इतर वस्तुओं के आयात में वृद्धि मज़बूत बनी रही और घनात्मक क्षेत्र में थी, जिससे वह दौड़ बनी रही जो मई में प्रारंभ हुई थी। यद्यपि, दिसंबर महीने में समग्र आयात में गिरावट

आई, फिर भी सोने और गैर-तेल गैर-स्वर्ण वस्तुओं में पूर्व में हुई बढ़ोतरी के चलते कुल मिलाकर तीसरी तिमाही में इनमें वृद्धि दर्ज की गई। परिणामस्वरूप, तीसरी तिमाही में व्यापार घाटा पिछली तिमाही की तुलना में और अधिक बढ़ गया। 2014-15 के लिए सीएडी का अनुमान पिछले वर्ष के आंकड़ों की तुलना में फिलहाल कम रखा गया है। सीएडी को न केवल तेज संविभाग प्रवाह के रूप में निवल पूंजीगत अंतर्वाहों द्वारा आसानी से वित्तपोषित किया गया है, बल्कि इसे विदेशी प्रत्यक्ष निवेश अंतर्वाह और बाह्य वाणिज्यिक उधारियों का भी सहयोग मिला।

पूंजीगत प्रवाह माध्यम

22. उभरते बाजारों की अर्थव्यवस्थाएं वैश्विक अर्थव्यवस्था के साथ तेज गति से संघटित हो रही हैं। यह समेकन चालू और पूंजी खाता प्रवाह द्वारा प्रेरित है। पूंजी के निवेशक केवल उन्हीं आस्तियों और बाजार के प्रति ही ईमानदान हैं जो अधिक जोखिम आधारित प्रतिफल देने का वादा करते हैं। जब जोखिम-प्रतिफल समीकरण बदलते हैं तो उस समय तेजी से वापसी करने की प्रवृत्ति अक्सर होती है। घरेलू बचत दर अधिक होने के बावजूद, विश्व में दूसरी सर्वोच्च वृद्धि दर प्राप्त करने हेतु भारत को विदेश से पूंजी आयात करने की आवश्यकता है। पिछले ढ़ाई दशकों से चालू खाते को धीरे-धीरे मुक्त कर दिया गया है। संपूर्ण पूंजी खाता परिवर्तनीयता और पूंजीगत प्रवाह को बढ़ाने के लिए और अधिक नपा-तुला दृष्टिकोण अपनाया गया है। प्रत्यक्ष विदेशी निवेश की अनुमति अधिकांश क्षेत्र में कुछ क्षेत्रवार सीमाओं के साथ प्रदान की गई है। सरकारी प्रतिभूतियों और कारपोरेट बांड में संविभाग निवेश को सूक्ष्म उच्चतर सीमाओं, जो विकसित परिप्रेक्ष्य में घट-बढ़ के तहत हैं, के अधीन रखा गया है। ऋण प्रवाह में, कतिपय प्रतिबंध बने हैं, इन प्रतिबंधों में बाह्य वाणिज्यिक उधारियों की कुल मात्रा, लागत उच्चतर सीमा, सामान्य कारपोरेट उद्देश्यों के लिए एक लघु खिड़की को छोड़कर अधिकतम सीमा के साथ अंतिम-उपयोग शामिल हैं। जहां तक सीएडी के वित्त पोषण का संबंध है, निवल पूंजीगत अंतर्वाह 2014-15 में पर्याप्त से अधिक रहने की संभावना है।

पण्य कीमत माध्यम

23. अनेक उभरती बाजार और विकासशील अर्थव्यवस्थाएं (ईएमडीई) अपनी आर्थिक गतिविधियों के लिए आवश्यक पण्यों के आयात पर निर्भर हैं। इन पण्यों की कीमतों को अक्सर अधिक अस्थिरता के जरिए चित्रित किया जाता है। भारतीय संदर्भ में, सीएडी में सबसे अधिक योगदानकर्ता तेल आयात है और पेट्रोलियम के उत्पादों की कीमते इनके मुद्रास्फीतिकारी प्रभाव के साथ गणना करने के लिए भी बहुत महत्त्वपूर्ण हैं। जैसे-जैसे हमारी अर्थव्यवस्था बढ़ी है, वैसे-वैसे पेट्रोलियम उत्पादों पर विश्वास काफी बढ़ा है और बढ़ी मांग को अधिक आयात के जरिए पूरा किया जाना है। पिछले राजकोषीय वर्ष में, भारत ने लगभग 150 बिलियन अमरीकी डॉलर की कीमत का कच्चा तेल आयात किया था जो कि कुल वार्षिक कच्ची खपत का लगभग 75 प्रतिशत हिस्सा है। इस प्रकार, तेल जैसे पण्य की कीमत अस्थिरता का विस्तार प्रभाव भारत जैसी उभरती बाजार और विकासशील अर्थव्यवस्था पर बहुत अधिक है।

विश्वास माध्यम

24. वैश्विक वित्तीय स्थितियों की अनिश्चिताओं का प्रभाव विश्वास माध्यम के जरिए स्पष्ट है। भारत में प्रभावित होने वाला पहला बाजार घटक इक्विटी है, इक्विटी बाजार विदेशी पूंजी के लिए बहुत अधिक सुगम माध्यम है। उदाहरण के लिए, एक अनुमान के अनुसार, दिसंबर 2014 की स्थिति के अनुसार बाजार पूंजीकरण में 23 प्रतिशत और इक्विटी घटक में प्रवाहमान स्टाक में 47 प्रतिशत हिस्सेदारी विदेशी संविभाग निवेशकों (एफपीआई) की है। निवेश पर सीमाएं होने के बावजूद, एफपीआई ने अधिक प्रतिफल पाने के लिए ऋण प्रतिभूतियों में एक्पोज़र लेने की इच्छा भी जाहिर की है। यह सबसे अधिक संवेदनशील होने का प्रमुख स्रोत साबित हो सकता है। यूरोपीय ऋण संकट से उत्पन्न वैश्विक जोखिम विमुखता के चलते काफी कमी आई है और भारतीय इक्विटी से त्वरित बहिर्वाह हुआ है और हाल ही में, ऋण बाजार में भी कमी देखी गई है जैसा कि 2013 में टेपरिंग की बात करने के बाद देखी गई थी। जब अंतरराष्ट्रीय निवेशक सुरक्षित जगह की तलाश में होते हैं, तो अगला प्रभावित होने वाला बाजार विनिमय दर बाजार होता है। इक्विटी और ऋण बाजार में हुई कमी को विदेशी मुद्रा की मांग के जरिए पूंजीगत बहिर्वाह द्वारा बढ़ाया जाता है। इस प्रकार, नीचे की ओर उतरोत्तर वृद्धि समग्र वित्तीय स्थिरता के लिए नुकसानदायक हो सकती है।

25. वैश्विक संकट के प्रभाव-विस्तार ने घरेलू अतिसंवेदनशीलता को बढ़ा दिया है। फेड रिज़र्व द्वारा मई 2013 को गई टेपिरिंग की घोषणा का प्रभाव घरेलू अतिसंवेदनशीलता के कारण बहुत अधिक था। चालू खाते का घाटा (सीएडी) 2006 की जीडीपी के लगभग 1 प्रतिशत से बढ़कर 2013 में लगभग 5 प्रतिशत हो

गया, वास्तविक विनिमय दर बढ गई थी, राजकोषीय घाटा और मुद्रास्फीति बढ़ गई थी। यद्यपि, विदेशी मुद्रा भंडार की स्थिति अच्छी थी किंतु अर्थव्यवस्था में मंदी व्याप्त थी।

26. क्रेडिट रेटिंग कार्रवाई और दृष्टिकोण का प्रभाव भी विश्वास माध्यम पर पड़ा है। अंतरराष्ट्रीय क्रेडिट रेटिंग एजेन्सी की किसी भी प्रकार की प्रतिकूल टिप्पणी कारपोरेट की उधार लागत को प्रभावित करता है। यह पूंजीगत प्रवाहों और विनिमय दर को भी प्रभावित करता है। पूंजीगत प्रवाहों में किसी प्रकार के परिणामी परिवर्तन से आस्ति कीमतों में गिरावट आएगी और अस्थिरता बढ़ जाएगी।

प्रतिफल संवाहक व्यापार (कैरी ट्रेड) माध्यम

27. 'प्रतिफल संवाहक व्यापार'मुद्रा बाजार में बहुत ही प्रचलित ट्रेडिंग रणनीति है। इसमें ट्रेडर्स कम ब्याज दरों पर मुद्राएं उधार लेते हैं और उसे अधिक ब्याज दरों वाली मुद्राओं में निवेश करते हैं और उसे प्राप्त मार्जिन से लाभ कमाते हैं। वैश्विक वित्तीय संकट के पूर्व येन और पण्य मुद्राओं में प्रतिफल संवाहक व्यापार बहुत ही सामान्य बात थी। हाल के दिनों में, रियायती मौद्रिक नीतियों और विकसित अर्थव्यवस्थाओं में शून्य-सदृश ब्याज वातावरण होने के कारण उभरती बाजार अर्थव्यवस्थाओं की मुद्राएं प्रतिफल संवाहक व्यापार के अवसर के रूप में उभरी हैं। प्रतिफल संवाहक व्यापार में समस्या इस बात की है कि वे अंतर्निहित रूप से अस्थिर होते हैं। एक समान पक्षपात के प्रभाव और देश के लिए जटिल नीति को देखते हुए उच्च प्रतिफल वाली मुद्रा की प्रारंभिक खरीद मुद्रा को मंहगी करने पर प्रतिकूल प्रभाव डालती है क्योंकि अधिक मूल्य वाली विनिमय दर देश के निर्यात की प्रतिस्पर्धा को नुकसान पहुंचाती है। प्रतिफल संवाहक व्यापार, जो कि सामान्यतः आकस्मिक और द्वेषपूर्ण है, को करने के संबंध में उसी समय निर्गम के लिए लिवरेज्ड स्थितियों के शीर्ष के चलते प्रवाहों पर वापसी होती है और घरेलू मुद्रा के मूल्य में गिरावट आ जाती है। हाल के दिनों में, रिज़र्व बैंक ने अल्पावधि ऋण बाजार, जो विदेशी मुद्रा भंडार को भी प्रभावित कर रहा था, में अस्थिर एफपीआई प्रवाह की प्रवृत्ति देखी है। अल्पावधि सरकारी प्रतिभूति बाजार में अस्थिर एफपीआई प्रवाहों को ध्यान रखते हुए रिज़र्व बैंक ने पूर्व की तुलना में दिनांकित सरकारी प्रतिभूतियों और तीन वर्ष अथवा उससे अधिक की अवशिष्ट परिपक्वता रखने वाले हाल के कारपोरेट बांड में एफपीआई निवेश को सीमित कर दिया है। इसके पीछे दो उद्देश्य है (अ) ब्याज दर और विनिमय दर अस्थिरता को रोकना और दीर्घावधि स्थिर निवेशों को आकर्षित करके ऋण बाजार को विकसित करना।

संपर्क-प्रभाव (कन्टैमनेशन) माध्यम

28. 2013 में, बाह्य कारकों और बाह्य निवेशकों की जोखिम वहन क्षमता में आयी कमी के कारण मुख्यतः रुपये में बहुत अधिक अस्थिरता महसूस की गई। 22 मई 2013 को फेडरल रिज़र्व द्वारा क्यूई टेपरिंग के संकेत के बाद और चालू खाते का घाटा अधिक होने की बढ़ती चिंता के कारण विनिमय दर मार्च 2013 की तुलना में सितंबर 2013 में 15 प्रतिशत के तीव्र मूल्यह्रास के साथ ₹63.75 हो गई, 28 अगस्त 2013 को डॉलर की तुलना में रुपये गिरकर अपने निम्नतर स्तर ₹68.85 पर पहुंच गया। रिज़र्व बैंक और सरकार दोनों के द्वारा की गई नीतिगत कार्रवाईयों के पश्चात रुपये में धीरे-धीरे सुधार हुआ और मार्च 2014 के अंत में यह ₹60.10 हो गया। 2014-15 की दूसरी तिमाही में अमरीकी डॉलर की तुलना में रुपये में गिरवट आई, इसका कारण अगस्त के दूसरे सप्ताह से सितंबर 2014 के पहले सप्ताह के दौरान डॉलर का भाव बढ़ना था। अधिक अस्थिरता की अवधि के दौरान भारतीय कंपनियां अपनी आधार रेखा और भावी कारोबारी क्षमताओं के गंभीर निहितार्थ सहित लेनदेन, स्थानांतरण और आर्थिक एक्पोज़र के जरिए मुद्रा में हुई तीव्र घट-बढ़ से प्रभावित हुई थी।

29. भारतीय कंपनियों द्वारा विदेशी मुद्रा में विदेशों से उधारियां लेने से ब्याज दरें और विनिमय जोखिम दर बहुत बढ़ गई। विदेशी मुद्रा परिवर्तनीय बांड का मोचन सुखद स्थिति में न होना बढ़ती इक्विटी कीमतों के अनिश्चित आधार पर इस प्रकार के विदेशी मुद्रा बांड जारी करने में कारपोरेट के लिए जोखिम पर प्रकाश डालता है। कारपोरेट के बड़े अन्हेज्ड विदेशी एक्पोज़र न केवल कारपोरेट के तुलन-पत्रों के लिए नुकसानदायक था, बल्कि वित्तीय स्थिरता के लिए भी हानिकारक था। रिज़र्व बैंक हमारे कारपोरेट की सुदृढ़ जोखिम प्रबंध प्रणाली की आवश्यकता पर जोर दे रहा है। रिज़र्व बैंक एक दिशा में भारी निवेश से प्रतिभागियों को सचेत कर रहा है। बैंकों के लिए यह जरुरी है कि वे जोखिम प्रीमिया में पर्याप्त रूप से कीमत-निर्धारण करके ग्राहकों के अनहेज्ड एक्पोज़र का सख्ती से मूल्यांकन करें। पिछले कई वर्षों में, घरेलू कारोबार आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए अपनी क्षमता को दांव

पर रखकर और जोखिम-प्रतिफल लेनदेन का उचित मूल्याकन किए बिना भारतीय कंपनियां ने विदेशी कपंनियों का संस्थापन/ अधिग्रहण किया है। जब वैश्विक स्थिति दबावपूर्ण हुई, तो इन विदेशी प्रतिष्ठानों की व्यवहार्यता ने घरेलू तुलन-पत्रों को प्रभावित किया। परिणामस्वरूप, बड़े नुकसान के साथ विनिवेश हुआ है।

केंद्रीय बैंकों की कार्रवाईयां और संचार माध्यम

30. विकसित अर्थव्यवस्थाओं के केंद्रीय बैंकों की कार्रवाइयों का प्रभाव उभरते बाजारों पर पड़ता है। इसके प्रभाव-विस्तार पर विद्वानों और नीति फोरमों में चर्चा होती है। मौद्रिक नीति की कार्रवाइयां ब्याज दर, विनिमय दर, पूंजीगत प्रभाव और आस्ति मूल्य माध्यमों के जरिए पास होती हैं। फेडरल रिज़र्व की बड़ी मात्रा में आस्ति खरीद कार्यक्रम ने अमरीकी नियत आय प्रतिभूतियों के प्रतिफल और अब तक अमरीकी डॉलर के मूल्य को कम कर दिया। बैंक ऑफ जापान और यूरोपियन सेंट्रल बैंक द्वारा की गई क्यूई घोषणा का प्रभाव भी समान हो सकता है किंतु इसकी मात्रा में अंतर हो सकता है। ऋणात्मक रेपो दर की स्वीडिश रिक्सबैंक की घोषणा और सरकारी बांडों में 10 बिलियन के एसईके की खरीद का इसका निर्णय और यूरो-सीएचएफ मंच को छोड़ने का स्विश नेशनल बैंक के अचानक लिए गए कदम ने वित्तीय बाजारों में परेशानी पैदा कर दी है। जैसे-जैसे विकसित अर्थव्यवस्थाओं और उभरते बाजारों के बीच ब्याज दर विभेदकता बढ़ती है, वैसे-वैसे अधिक पूंजी ईएमडीई में प्रतिफल की तलाश में आ जाती है। किंतु जब आसान मौद्रिक नीति को समाप्त किया जाता है, उभरते बाजारों को एक 'आकस्मिक ठहराव' अथवा पूंजी प्रवाहों की वापसी जैसा कि 2013 की ग्रीष्म में हुआ था, का सामना करना पड़ता है। ईएमडीई को आस्ति कीमतों में त्वरित बढ़ोतरी अथवा गिरावट के लिए और प्रभावशाली अर्थव्यवस्थाओं की नीतिगत कार्रवाइयों से उत्पन्न विनिमय दर अस्थिरता के लिए तैयार करने की जरुरत है। यह सही है कि प्रत्येक केंद्रीय बैंक घरेलू नीतिगत अनिवार्यताओं के लिए अपने खुद के अधिदेश के लिए बाध्य है, किंतु गैरइरादतन प्रभाव-विस्तार होता है जो अन्य अर्थव्यवस्थाओं को प्रभावित करता है, जिसका उल्लेख गवर्नर राजन अनेक अंतरराष्ट्रीय फोरम में कर रहे हैं। सौभाग्यवश, इस प्रभाव-विस्तार को अब चिह्नित करना शुरू किया जा रहा है। अपने नवीनतम मौद्रिक नीति वक्तव्य में फिडरल रिज़र्व ने उल्लेख किया कि आर्थिक स्थितियों के उनके मूल्यांकन में अनेक सूचनाओं को ध्यान में रखा जाएगा जिसमें अंतरराष्ट्रीय गतिविधियां शामिल हैं। यूरोपियन सेंट्रल बैंक के अध्यक्ष ने भी इसे स्वीकार किया कि यूरोपियन सेंट्रल बैंक उभरते बाजारों में अस्थिरता से पैदा होने वाले जोखिम पर दृष्टि रख रहे थे।

31. 2008 के वैश्विक वित्तीय संकट के बाद, केंद्रीय बैंकों को संचार के जरिए अपनी नीतिगत सोच और कार्रवाई में पारदर्शिता बढ़ाने की जरूरत है। 'वायदा मार्गदर्शन' अब अनेक केंद्रीय बैंकों के मौद्रिक नीति उपाय का एक भाग है। मौद्रिक नीति में संचार की भूमिका को देखने के केंद्रीय बैंकों के नजरिए में आकस्मिक परिवर्तन पाया गया है (पॉल जेंकिन्स 2001[6])। केंद्रीय बैंक के सामने संचार से जुड़ी चुनौती इस बात की है कि ऐसी भाषा का प्रयोग करें जो स्पष्ट हो और आम जनता में उसे लेकर कोई संदेह न हो। 2014 की अपनी कई बैंठकों में फेडरल रिज़र्व ने इस बात के संकेत दिए हैं कि वह ब्याज दर बढ़ाने के पहले 'सहनशील (पेशेन्ट)' होगा। इसे कम ब्याज दर और रियायती चक्र की उतरोत्तर वापसी और बाजार में आकस्मिक-आघातों के लिए बाजारों को तैयार करने के रूप में देखा गया। तथापि, बाजारों में 'सहनशील (पेशेन्ट)' शब्द और इसकी पात्रता अथवा निष्कासन को लेकर अगली बैठक के कार्यवत्त में अलग-अलग व्याख्या की गई। दूसरे शब्दों में, वायदा मार्गदर्शन बाजार की तुलना में केंद्रीय बैंकों के लिए चुनौती के रूप में उभर रहा है जैसा कि बैंक ऑफ इंग्लैंड द्वारा महसूस किया गया है और अब फेडरल रिज़र्व द्वारा किया जा रहा है। इस प्रकार, विकसित अर्थव्यवस्थाओं के केंद्रीय बैंकों की नीतिगत प्रवृत्ति बाजार में अस्थिरता पैदा कर सकती है और भारत जैसे इएमडीई पर इसका प्रभाव पड़ सकता है।

ई. भारत के बाह्य क्षेत्र की अतिसंवेदनशीलताएं

32. अब मैं भारत के बाह्य क्षेत्र की मौजूदा अतिसंवेदनशीलता की तुलना 1990-91, जब बीओपी संकट ने हमारे सूक्ष्म आर्थिक नीतिगत ढांचे में अमूल-चूक परिवर्तन किया था, से करना चाहता हूँ। 1990-91 और अब की स्थिति के बीच व्यापार घाटा शीर्ष पर पहुंचने के बाद मार्च 2013 के अंत में कम होकर 4.8 रहा गया किंतु मार्च 2014 के अंत में यह त्वरित सुधार के साथ 1.7 प्रतिशत रह गया; मार्च 2015 के अंत के लिए सीएडी का स्तर इसी के समान

[6] कम्यूनिकैटिंग कैनाडियन मौद्रिक नीति : अधिक पारदर्शिता के प्रति: पॉल जेंकिन्स, उप गवर्नर, बैंक ऑफ कनाडा, मई 2001।

कम बना रहने की संभावना है। अदृश्य मदें बहुत ही स्थिर बनी हुई है और चालू खाते का सहयोग कर रही है। पूंजीगत प्रवाह ने न केवल सीएडी का वित्तपोषण किया है बल्कि हमारे मुद्रा भंडार को बढ़ाने में भी योगदान दिया है। भारत का निवल आईआईपी (-) 346 बिलियन अमरीकी डॉलर है जबकि पिछले वर्ष यह (-) 313 बिलियन अमरीकी डॉलर रहा था। बाह्य ऋण में प्रमुख हिस्सा वाणिज्यिक ऋण का है क्योंकि हाल के वर्षों में आधिकारिक विकास सहायता में गिरावट आई है। ऋण चुकौती अनुपात भी मार्च 2013 के 5.9 प्रतिशत से बढ़कर सितंबर 2014 में 7.5 प्रतिशत हो गया है। यद्यपि कई अतिसंवेदनशीलता मानदंड़ों में कुछ गिरावट देखी गई है, फिर भी हम 1990-91 की तुलना में इस समय बहुत ही बेहतर स्थिति में हैं (सारणी)। इस प्रकार, बाह्य क्षेत्र बेहतर स्थिति में है और देश ने बाह्य आघातों से बचने के लिए 1990-91 में किए गए उपायों की तुलना में बेहतर उपाय किए हैं।

सारणी : भारत की बाह्य अतिसंवेदनशीलता संकेतक
(मार्च को समाप्त स्थिति के अनुसार)

संकेतक	1991	2001	2011	2014	2014*
1. जीडीपी की तुलना में बाह्य ऋण अनुपात (%)	28.7	22.5	18.2	23.5	23.2
2. कुल ऋण (मूल परिपक्वता) की तुलना में अल्पावधि अनुपात (%)	10.2	3.6	20.4	20.2	18.9
3. कुल ऋण (अवशेष परिपक्वता) की तुलना में अल्पावधि अनुपात (%)	15.8	10.3	40.6	39.6	NA
4. कुल ऋण की तुलना में रियायती ऋण अनुपात (%)	45.9	35.4	14.9	10.5	9.8
5. कुल ऋण की तुलना में रिज़र्व अनुपात (%)	7	41.7	95.9	68.8	68.9
6. रिज़र्व की तुलना में अल्पाविधि ऋण अनुपात (%)	146.5	8.6	21.3	29.3	27.5
7. रिज़र्व (अवशेष परिपक्वता) की तुलना में अल्पावधि अनुपात (%)	227	24.6	42.3	57.4	NA
8. आयात का रिज़र्व कवर (महीनों में)	2.5	8.8	9.5	7.8	8.1
9. ऋण चुकौती अनुपात (%)	35.3	16.6	4.4	5.9	7.5
10. बाह्य ऋण (बिलियन अमरीकी डॉलर)	83.8	101.3	317.9	442.2	455.9
11. निवल अंतरराष्ट्रीय निवेश स्थिति (आईआईपी) (बिलियन अमरीकी डॉलर)	-	-76.2	-207.0	-332.7	-353.7
12. जीडीपी की तुलना में आईआईपी अनुपात* (%)	-	-16.5	-12.1	-17.7	-17.8
13. जीडीपी की तुलना में सीएडी अनुपात	3	0.6	2.8	1.7	2.0

(* सितंबर 2014 को समाप्त स्थिति)

एफ. विदेशी मुद्रा भंडार : बचाव की पहली व्यवस्था

33. विदेशी बाजारों में अस्थिरता को नियंत्रित करने के लिए पहले उपाय के रूप में विदेशी मुद्रा भंडार का उपयोग किया जाता है और इसका उपयोग पूंजीगत प्रवाह में 'आकस्मिक अवरोधों' अथवा वापसी की स्थिति में पर्याप्त चलनिधि प्रदान करने के लिए भी उपयोग किया जाता है। द्विपक्षीय और बहुपक्षीय सुरक्षा कवच भी सहयोगी हैं। वैश्विक वित्तीय संकट की एक प्रतिक्रिया चुनिंदा केंद्रीय बैंकों के साथ फेडरल रिज़र्व द्वारा द्विपक्षीय स्वैप करार करने के संकेत दिए जा रहे थे। इस प्रकार के द्विपक्षीय/बहुपक्षीय सहयोगी व्यवस्था संकट के दौरान एक आसान विकल्प नहीं है। एशियन संकट ने महसूस कराया कि एक स्व बीमा नीति के रूप में किसी संकट का सामना करने के लिए भारी मुद्रा भंडार की जरूरत है।

34. 1991 से, विदेशी मुद्रा भंडार 5.8 बिलियन अमरीडी डॉलर से धीरे-धीरे बढ़कर अपने उच्चतम स्तर अर्थात लगभग 333 बिलियन अमरीकी डॉलर हो गया है। भारत के विदेशी मुद्रा भंडार की यह स्थिति चालू खाता और पूंजीगत खाता गतिक का योगदान है। भारत का अधिकांश विदेशी मुद्रा भंडार भारतीय रिज़र्व बैंक द्वारा रखा जाता है जिसमें मुख्यतः विदेशी मुद्रा आस्तियां और सोना शामिल है, एसडीआर आबंटन और आईएमएफ में रिज़र्व का हिस्सा सरकार द्वारा रखा जाता है।

रिज़र्व प्रबंधन के प्रमुख पहलू

35. बाजार और निवेशकों में विश्वास बना रहे, इसलिए रिज़र्व का रख-रखाव किया जाता है, संकट के दौरान यह एक बीमा के रूप में कार्य करता है और अस्थिरता के समय आवश्यक जरूरत को पूरा करने के स्रोत के रूप में कार्य करता है और बीओपी असंतुलन को नियंत्रित करता है। रिज़र्व प्रबंधन अनिवार्य रूप से पर्याप्त चलनिधि का रखरखाव करने की एक कला है, जब जरूरत पड़े तो पूंजी की सुरक्षा सुनिश्चित करें और सुरक्षा, चलनिधि और प्रतिफल (एसएलआर) व्यवस्था के तहत लाभ प्रदान करें। इसलिए, यह जोखिम और प्रतिफल के बीच लेनदेन करने के निर्णय पर निर्भर रहता है। लंबे समय तक कम बना रहा ब्याज परिवेश ने रिज़र्व पर प्राप्त होने वाले प्रतिफल को प्रभावित किया है जो 2013-14 में 1.21 प्रतिशत था। इससे यह सुझाव मिला है कि गैर-परंपरागत आस्ति वर्ग और मुद्राओं में विविधता द्वारा प्रतिफल को बढ़ाने की जरुरत है। तथापि, इस प्रकार की रणनीतियों का अपना खुद का जोखिम शेयर होता है। उदाहरण के लिए, बाजार में गिरावट के

दौरान सुरक्षित जगह का प्रवाह ईएमडीई की मुद्राओं और आस्तियों में किए गये निवेश को नुकसान पहुंचा सकता है। बाजार हलचल के दौरान गैर-परंपरागत आस्तियों पर उच्च प्रतिफल की संभावना समाप्त हो जाती है।

36. हमें यह भी याद रखना चाहिए कि रिज़र्व को रखने में लागत लगती है। इस लागत का एक राजकोषीय-सदृश निहितार्थ है क्योंकि स्थिरीकरण की लागत या तो सरकार द्वारा या फिर स्वयं केंद्रीय बैंक द्वारा वहन की जाती है। रिज़र्व के रखरखाव की लागत की माप करने के लिए अलग-अलग दृष्टिकोण हैं। सबसे सामान्य प्रणाली में इसकी माप घरेलू प्रतिभूतियों में निवेश की अवसर लागत के रूप में की जाती है। बाहर से उधार ली गई पूंजी लागत और रिज़र्व लागत का अंतर होने के कारण इसे रखाव लागत के रूप में भी देखा जा सकता है। तथापि, रिज़र्व रखाव की लागत का मूल्यांकन भारी अस्थिरता को नियंत्रित करने की एक स्थिर विनिमय दर प्रणाली प्रदान करने जैसे लाभ की तुलना में देखना चाहिए। एक स्थिर विनिमय दर प्रणाली बाजार प्रतिभागियों को लाभान्वित करती है क्योंकि यह अनिश्चिता और हेजिंग लागत को कम करती है, किंतु पर्याप्त रिज़र्व के लाभ को आसानी से चिह्नित नहीं किया जाता है जबकि लागत ज्ञात होती है। इसलिए, रिज़र्व पर्याप्तता के लिए कोई भी लागत-लाभ दृष्टिकोण में किसी अर्थव्यवस्था जो अधिक मुक्त पूंजी खाते की ओर अग्रसर है, के जोखिम का विवेकपूर्ण मूल्यांकन किया जाता है।

रिज़र्व की पर्याप्तता

37. पर्याप्तता का परंपरागत मीट्रिक निर्यात कवर, मुद्रा भंडार में अल्पावधि ऋण/अस्थिर पूंजी प्रवाह अनुपात और व्यापक मुद्रा में मुद्रा भंडार का अनुपात है। भारतीय संदर्भ में, निर्यात कवर सितंबर 2013 को समाप्त 6.6 महीने से बढ़कर सितंबर 2014 में समाप्त 8.1 महीने हो गया है। 2013-14 में विदेशी मुद्रा भंडार की तुलना में चालू खाता घाटा अनुपात में सुधार हुआ अर्थात 2012-13 के 30.1 की तुलना में 2013-14 में यह 10.6 रह गया है। 1990-91 में यह अनुपात 166.0 था। विदेशी मुद्रा भंडार की तुलना में अल्पावधि ऋण सितंबर 2013 के अंत के 34.2 प्रतिशत से घटकर सितंबर 2014 के अंत में 27.7 प्रतिशत रहा गया। मुद्रा भंडार में अस्थिर पूंजी प्रवाह अनुपात (संचयी संविभाग अंतर्वाह और अल्पावधि ऋण शामिल करने के लिए परिभाषित) सितंबर 2013 के अंत के 97.2 प्रतिशत से घटकर सितंबर 2014 के अंत में 94.7 प्रतिशत रह गया। तथापि, भारत का निवल आईआईपी लंबे समय से ऋणात्मक रहा है और मार्च 2013 के 326 बिलियन अमरीकी डॉलर से और बढ़कर सितंबर 2014 में 353 बिलियन अमरीकी डॉलर हो गया। इसलिए, जहां कुछ मीट्रिक हमारी बाह्य क्षेत्र की अतिसंवेदनशीलता के कुछ पक्षों में सुधार के संकेत देती हैं, वहीं आत्मसंतोष की कोई गुंजाइश नहीं है क्योंकि भारत विदेशी पूंजी प्रवाह जो कि अचानक बंदी और/ अथवा वापसी के आवधिक चरणों के लिए अतिसंवेदनशील है, पर निर्भर रहने वाले चालू खाता घाटा वाली अर्थव्यवस्था है।

भावी चुनौतियां

38. मौजूदा अनुकूल वैश्विक आर्थिक परिवेश में 2015 में उस समय कुछ अस्थिरता आ सकती है, तब फेडरल रिज़र्व की कार्रवाई की संभावना के चलते वैश्विक चलनिधि की कुछ वापसी होगी। फेडरल रिज़र्व द्वारा मौद्रिक नीतिगत रुख की वापसी के चलते अन्य प्रमुख केंद्रीय बैंकों द्वारा अपनाई जा रही आसान नीति को जारी रखने की संभावना कम हो गई है। मौजूदा गिरावट के संदर्भ में चीन की बिनिमय दर नीति में भी रुपये सहित एसियाई मुद्राओं को बाह्य जोखिम होने के संकेत किए गए हैं। जैसे-जैसे घरेलू अर्थव्यवस्था में सुधार होने से आर्थिक सुस्ती कम होगी, वैसे-वैसे निवेश चक्र में सुधार के लिए और अधिक गैर-तेल गैर स्वर्ण आयात की आवश्यकता होगी। सोने के आयात संबंधी नियमों में रियायत बरतने से 2014-15 में चालू खाता घाटा बढ़ा है। जिस तरह से कीमतों को कम करने की प्रतिस्पर्धा तीव्र हुई है उससे भले कच्चे तेल की अंतरराष्ट्रीय कीमतें कम बनी रहने का अनुमान है, किंतु भूराजनीतिक जोखिम का दोबारा होने से, विशेष रूप से मध्य-पूर्व और यूक्रेन में तेल की कीमतें अपेक्षाकृत स्थिर बनी रह सकती है और इस प्रकार इसका असर भारत के तेल आयात बिल पर पड़ सकता है। इससे भारत के चालू खाता घाटा के लिए उर्ध्वाधर जोखिम पैदा हो सकता है। इससे अतिरिक्त, 2013-14 में रुपया विनिमय दर में समायोजन और निर्यात में हुए कुछ सुधार के बावजूद वैश्विक संवृद्धि संभावना के बारे में अनिश्चितता के चलते निर्यात में डाउनसाइट जोखिम पैदा हो सकता है।

39. कम चालू खाता घाटा, विदेशी मुद्रा भंडार में बढ़ोतरी और विनिमय दर स्थिरता अधिक लचीले बाह्य क्षेत्र के संकेत हैं। तथापि, बाह्य क्षेत्र के संकेतकों में हुआ सुधार किसी नीतिगत आत्मसंतोष का संकेत नहीं देता है। पूर्व में उल्लिखित सात माध्यमों के जरिए नवीकृत बाह्य दबाओं का प्रभाव पुनः प्रकट हो सकता है और इस प्रकार, यह भारत के बाह्य क्षेत्र के लिए चुनौती पैदा कर सकता है। बाह्य क्षेत्र की मजबूती वैश्विक गतिविधियां, उन्नत और घरेलू और नीतियों की राजकोषीय और मौद्रिक कार्रवाइयां का एक प्रकार्य है। वैश्विक गतिविधियों को प्रभावित करने में हमारी सीमित भूमिका को देखते हुए नीतियों का फोकस घरेलू समष्टि-आर्थिक बुनियादी सुविधाओं में सुधार करने पर रहा ताकि इस प्रकार के प्रभाव-विस्तार को कम किया जा सके। विशेष रूप से, नीतिगत ध्यान उन क्षेत्र-विशेष संरचनागत समस्याओं का समाधान करने के लिए जरुरी है जो वृद्धि, मुद्रास्फीति, सीएडी, राजकोषीय घाटा और अर्थव्यवस्था की समग्र प्रतिस्पर्धा को प्रभावित करता है, पूंजी प्रवाह का एक बेहतर मिक्स सुनिश्चित करने के लिए सुचालक कारोबार परिवेश का ध्यान स्थिर गैर-ऋण सृजन प्रवाह और बेहतर गवर्नेंस पर होगा। भारत को देश के भीतर और बाह्य के पहरेदार जिनसे विश्वास मिलता है, वे नीति और देश के क्रियान्वयन की गति में किए गए महत्त्वपर्ण उपाय हैं।

समापन

40. सिद्धांत के रूप में, वित्तीय संकट नियमित रूप से होता रहा है - प्रत्येक संकट नया है किंतु इसका प्रभाव कई मायने में समान है। भारत के लिए, बाह्य क्षेत्र की अतिसंवेदनशीलता पिछले संकट की तुलना में अपेक्षाकृत कम है किंतु घरेलू क्षेत्र पर वैश्विक समष्टि-आर्थिक और भूराजनैतिक गतिविधयों को खारिज नहीं किया जा सकता है। इसलिए, वैश्विक वित्तीय परिदृश्य सहित हमारी बढ़ती अंतर-संबद्धता के संदर्भ में 7 सी माध्यमों के जरिए उत्पन्न संरचनागत और चक्रीय चुनौतियों पर ध्यान देना जारी रखने की जरुरत है। विदेशी मुद्रा भंडार रक्षा की प्रथम पंक्ति के रूप में कार्य करता है किंतु मुद्रा भंडार का अधिग्रहण और धारिता की अपनी लागत और चुनौतियां हैं। जहां, मुद्रा भंडार अल्पावधि में अदृश्य बाजार गतिविधियों का सामना करने के लिए गुंजाइश प्रदान करता है, वहीं यही सुदृढ़ समष्टि-आर्थिक प्रबंधन है जो कि दीर्घावधि में एक बेहतर सुरक्षा है। इसका सार यह है कि अनिश्चित वैश्विक परिवेश के बावजूद, भारत की स्थिति पहले की तुलना में काफी बेहतर है जिसे दि इकोनामिक्ट के नवीनतम अंक (21 फरवरी 2015) में *'विश्व की सर्वाधिक गतिशील बड़ी अर्थव्यवस्था बनने का एक बहुमूल्य अवसर'* कहा गया है।

मुझे धैर्यपूर्वक सुनने के लिए आप सभी का धन्यवाद।